लेखक परिचय

संस्कृत के प्रख्यात विद्वान् एवं कवि हरिदत्त शर्मा सम्प्रति संस्कृत–विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हैं तथा पूर्व में विभागाध्यक्ष रह चुके हैं। उनका जन्म 8 जनवरी, 1948 को उत्तर प्रदेश के हाथरस नगर में हुआ। उनकी माता श्रीमती हरप्यारी देवी एवं पिता श्री लहरी शङ्कर शर्मा थे। उनकी आरम्भिक शिक्षा हाथरस में हुई तथा उच्च शिक्षा इलाहाबाद विश्वविद्यालय में। यहाँ एम0ए0 संस्कृत परीक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने पर उन्हें छः स्वर्ण एवं रजत पदक प्राप्त हुए। यहीं पर उन्होंने प्रो0 आद्या प्रसाद मिश्र के निर्देशन में संस्कृत–काव्यशास्त्रीय भावों पर शोध कर डी0 लिट् उपाधि प्राप्त की। सन् 1972 में डॉ0 शर्मा की नियुक्ति इलाहाबाद विश्वविद्यालय में हो गई और वहीं उन्होंने प्रवक्ता, उपाचार्य एवं आचार्य के रूप में कार्य किया।

प्रो0 शर्मा ने रचनात्मक एवं आलोचनात्मक क्षेत्र में 12 ग्रन्थों का लेखन किया है तथा प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में उनके 60 शोध–निबन्ध प्रकाशित हो चुके हैं। उनके प्रमुख ग्रन्थ हैं–संस्कृत–काव्यशास्त्रीय भावों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन, गीतकन्दलिका, त्रिपथगा, उत्कलिका, बालगीताली, आक्रन्दनम्, लसल्लतिका, नवेक्षिका, Glimpses of Sanskrit Poetics and Poetry आदि। उनकी पाँच मौलिक रचनाओं पर उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान की ओर से, एक रचना पर दिल्ली संस्कृत अकादमी की ओर से तथा एक रचना 'लसल्लतिका' पर साहित्य अकादेमी, दिल्ली की ओर से प्रतिष्ठित पुरस्कार प्राप्त हुए। डॉ0 शर्मा के निर्देशन में अब तक 28 शोध–कार्य सम्पन्न हो चुके हैं।

प्रो0 शर्मा 15 देशों की शैक्षणिक–सांस्कृतिक यात्रा कर चुके हैं। जिनमें प्रमुख देश हैं– जर्मनी, फ्रांस, नीदरलैण्ड्स, आस्ट्रिया, मलेशिया, इण्डोनेशिया, इटली, अमेरिका, मॉरिशस, स्कॉटलैण्ड, थाईलैण्ड, जापान। थाइलैण्ड में वे तीन वर्ष तक 'विज़िटिंग प्रोफेसर' के रूप में कार्यरत रहे। उन्होंने अब तक 22 अन्तर्राष्ट्रीय, 18 राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा 80 संगोष्ठियों में भाग–ग्रहण किया है। वे अनेक विश्वविद्यालयों की उच्च समितियों के सदस्य हैं। उनकी रचनाएँ अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में निर्धारित हैं तथा उन पर अनेक शोध–कार्य हो रहे हैं। वे 'ए0आई0ओ0सी0' के उपाध्यक्ष पद पर रह चुके हैं तथा 2012 से 'आई0ए0एस0एस0' की 'कन्सल्टेटिव कमेटी' के सम्मानित सदस्य हैं। हाल ही में आपको वर्ष 2015 के राष्ट्रपति सम्मान से भी सम्मानित करने की घोषणा हुई है।

राजस्थान संस्कृत अकादमी, जयपुर

विशिष्ट व्याख्यान माला

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संस्कृत

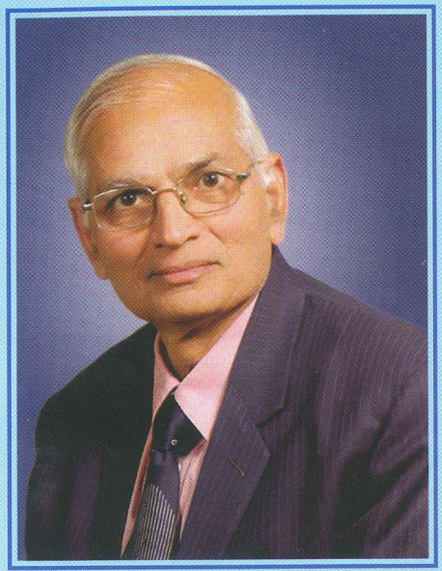

डॉ. हरिदत्त शर्मा

राजस्थान संस्कृत अकादमी

जे 15, अकादमी संकुल, झालाना सांस्थानिक क्षेत्रम्,
जयपुरम् (राजस्थानम्) दूरभाष : 0141–2709120

E-mail : rajasthansanskritacademy@gmail.com
Website : rajasthansanskritacademy.org

सम्पादकीय

विगत कुछ समय से वैश्विक परिदृश्य में भारतीय संस्कृति के प्रति एक अत्यन्त उत्साहजनक एवं सम्मानजनक भाव दिखलाई पड़ने लगा है जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण है संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा 21 जून को अन्तर्राष्ट्रीय योग दिवस के रूप में घोषित करना। यही नहीं अभी हाल ही में 28 जून से 2 जुलाई 2015 पर्यन्त थाइलैण्ड की राजधानी बैंकॉक में 16वें विश्व संस्कृत सम्मेलन में जिस मनोयोग से 60 देशों के लगभग 600 से अधिक विद्वानों ने विभिन्न चर्चाओं में सहभाग लिया वह विश्व की किसी भी अन्य भाषा के मुकाबले में संस्कृत की आधुनिकता एवं व्यापकता का परिचायक है।

संस्कृत निस्सन्देह भारत की प्राचीनतम भाषा तो है ही किन्तु यह एक ऐसी भाषा भी है जिसने सहस्राब्दियों से भारत को एकता के सूत्र में पिरो कर रखा है। इसकी सार्वकालिकता एवं सार्वदेशिकता निर्विवाद है। भारत की इस प्राण-भाषा को विगत कुछ शताब्दियों से वैश्विक विस्तार प्राप्त हुआ तथा अंग्रेजों के शासन-काल में यह इंग्लैण्ड सहित जर्मनी, फ्रांस, इटली जैसे पाश्चात्य देशों में प्रतिष्ठापित हुई। यह संस्कृत का ही चमत्कार था कि जर्मन विद्वान मैक्समूलर, अमरीकन इतिहासकार विल ड्यूरां, फ्रेंच स्कॉलर रोम्यां रोलां, ब्रिटिश इतिहासज्ञ आरनर्ड टोयनबी सहित अल्बर्ट आइंस्टीन, शॉपनहावर, हाइज़नबर्ग, सर जॉन वुडरॉफ, अडोल्फ सिल्चर जैसे अनेक विश्व-विख्यात वैज्ञानिकों, भाषा विज्ञानियों एवं साहित्यकारों ने इसकी मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की। इस संदर्भ में सर विलियम जोन्स का एक वक्तव्य यहां उद्धृत करना चाहूंगी-"The Sanskrit language, whatever be its antiquity is of wonderful structure, more perfect than the Greek, more copious than the Latin and more exuisitely refined than either".

प्रस्तुत व्याख्यान विगत कुछ शताब्दियों में संस्कृत के वैश्विक विस्तार को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। प्रो. हरिदत्त शर्मा इस कार्य के लिए सर्वाधिक उपयुक्त विद्वानों में से एक हैं क्योंकि आपने न केवल 15 देशों की शैक्षणिक यात्रा कर संस्कृत के विस्तार का गहन अध्ययन किया है वरन् थाइलैण्ड में तीन वर्ष तक 'विज़िटिंग प्रोफेसर' के रूप में अपनी सेवाएं भी दी हैं।

हम आशा करते हैं कि आधुनिक युग में संस्कृत की इस वैश्विक यात्रा के लेखे-जोखे का लाभ संस्कृत जगत के शोधार्थियों एवं विद्वानों को प्राप्त होगा। हमें इस बात का भी हर्ष है कि राजस्थान संस्कृत अकादमी की विशिष्ट व्याख्यान-माला में इस बार पण्डित बद्रीप्रसाद महर्षि चेरिटेबल ट्रस्ट एवं संस्कृत विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय का भी आयोजकीय सहयोग प्राप्त हुआ है तथा संस्कृत जगत् की तीन धाराएं एकत्व को प्राप्त हुई इसके लिए हम उनका अभिनन्दन करते हैं एवं आभार ज्ञापित करते हैं।

रेणुका राठौड़
निदेशक

प्रकाशक :
राजस्थान संस्कृत अकादमी,
जे-15, झालाना सांस्थानिक क्षेत्र, जयपुर
ई-मेल : rajasthansanskritacademy@gmail.com
वेब : www.rajasthansanskritacademy.org
दूरभाष : 2709120

लेखक :
प्रो. हरिदत्त शर्मा

सम्पादक
डॉ. रेणुका राठौड़

© सर्वाधिकार-प्रकाशकाधीन

मूल्य :
20 ₹ मात्र

मुद्रक :
राज. सहकारी मुद्रणालय, जयपुर

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में संस्कृत

- प्रो. हरिदत्त शर्मा

भारतवर्ष की प्राचीनतम एवं समृद्धतम भाषा संस्कृत समग्र विश्व में कब प्रतिष्ठित हुई, इस विषय को एक कालचक्र में बाँधना कठिन है, तथापि पाश्चात्य जगत् में इस प्राच्य भाषा के प्रसार को सामान्यतया 'पुनर्जागरण काल' से जोड़ा जा सकता है। 18वीं शताब्दी के अन्त में कलकत्ता में मुख्य न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश सर विलियम जोन्स ने 1784 में 'एशियाटिक सोसायटी' की स्थापना की, जिससे प्राच्य विद्या के अध्ययन, लेखन, भाषान्तरण एवं प्रकाशन को गति मिली। भाषा विज्ञानवेत्ता जोन्स ने ही प्रयत्नपूर्वक संस्कृत भाषा का अध्ययन किया और पहली बार यह मत व्यक्त किया कि ग्रीक, लैटिन, पर्शियन एवं संस्कृत का मूल रूप से पारस्परिक सम्बन्ध है। संस्कृत-ग्रन्थों के आंग्लानुवाद का प्रवर्तन हो चुका था। 1785 में लन्दन लौटने पर विल्किंस ने 'श्रीमद्भगवद्गीता' एवं 'हितोपदेश' का अनुवाद किया था और तदनन्तर स्वयं जोन्स ने 'गीतगोविन्द' एवं 'मनुस्मृति' का अनुवाद किया था, परन्तु जब जोन्स ने 1789 में महाकवि कालिदास के सरस-मधुर नाटक 'अभिज्ञानशाकुन्तल' का अँग्रेज़ी में अनुवाद प्रस्तुत किया, तो उसने साहित्य-जगत् में एक क्रान्ति उत्पन्न कर दी। इस कार्य के तुरन्त बाद जॉर्ज फॉर्स्टर ने इस नाटक का जर्मन भाषा में अनुवाद किया, जो जर्मनी के 'लाइप्ज़िग' नगर से 1791 में प्रकाशित हुआ। इस अनूदित रूप का जब जर्मनी के प्रतिष्ठित कवि गेटे ने अनुशीलन किया तो उसका हृदय आनन्दनर्तित हो उठा और उसने इस नाटक की भूरि-भूरि प्रशंसा की और अपने उद्गार उसने नाटक 'फाउस्ट' की भूमिका में व्यक्त किये। अभिज्ञानशाकुन्तल की वह जर्मनभाषीय प्रति आज भी जर्मनी के 'वाइमार' नगर में स्थित गेटे सङ्ग्रहालय में सुरक्षित रखी है

और मैंने उसका अवलोकन किया है। यहीं से जर्मनी एवं अन्य योरोपीय विद्वानों में संस्कृत-वाङ्मय के प्रति प्रेम बढ़ा तथा अनेक भाषा वैज्ञानिकों ने संस्कृत भाषा का विधिवत् अध्ययन किया, जिससे योरोपीय भाषाओं की संस्कृत से तुलना के पश्चात् तुलनात्मक भाषा विज्ञान का प्रवर्तन हुआ।

जर्मनी

इस प्रकार जर्मनी में भारतीय विद्या का आरम्भ 1800 ई. से ही हो गया था। बॉन विश्वविद्यालय में संस्कृत-पीठ की विधिवत् स्थापना 1818 ई. में हुई। पहली बार ऑगस्ट विल्हेम श्लिगल को इस पीठ पर अधिष्ठित किया गया। इस बीच बर्लिन में प्रसिद्ध भाषाशास्त्री हम्बोल्ट के नाम से 'हम्बोल्ट यूनिवर्सिटी' की स्थापना हुई, और हम्बोल्ट के ही प्रयास से 1821 ई. में फ्रांज़ बॉप को संस्कृत अध्यापक नियुक्त कर संस्कृत का शुभारम्भ किया गया। बॉप 1825 में फुल प्रोफेसर हुए तथा उन्होंने तुलनात्मक भाषा विज्ञान के परिप्रेक्ष्य में संस्कृत का अध्यापन एवं अनुसन्धान प्रवृत्त किया। 1821 ई. में ही जर्मनी के बर्जबुर्ग विश्वविद्यालय में 'चेयर ऑफ ओरियण्टल फिलोसॉफी एण्ड फिलोलॉजी' के नाम से एक चेयर की स्थापना हुई। योरोप में संस्कृत-विद्या के इस प्रवर्तन-काल में ही 1802 ई. में जर्मन संस्कृतज्ञ फ्रैडरिक श्लिगल फ्रांस की राजधानी पेरिस पहुँचा और वहाँ उसका साक्षात्कार एशियाटिक सोसायटी के सदस्य एलैग्जेण्डर हैमिल्टन से हुआ। उसने लेंगिल्स, ए. एल. डी. चेजी तथा फौरिल-इन तीन फ्रांसीसियों के साथ हैमिल्टन से संस्कृत-भाषा सीखी तथा संस्कृत की पाण्डुलिपियों पर अनुवाद कार्य आरम्भ किया और 1808 ई. में उसने भगवद्गीता एवं रामायण के अनेक अंशों के अनुवाद कर प्रकाशित किये। उधर फ्रांसीसी विद्वान, चेज़ी ने अभिज्ञानशाकुन्तल का फ्रैन्च में अनुवाद कर 1815 ई. में उसे प्रकाशित कर दिया। इस तरह आरम्भिक चरण में अनुवादों की धूम रही। जर्मनी में भारतीय विद्या एवं संस्कृत विद्या के अनेक केन्द्र खुलते गए और संस्कृत-अध्येताओं की वृद्धि भी होती चली गई। इस परंपरा में एक बडा नाम हुआ फ्रैडरिक मैक्समूलर, जिनका जन्म 1823 में जर्मनी के देसाउ नगर में हुआ। उन्होंने 1845 में लाइप्ज़िग युनिवर्सिटी से पी.एच.डी. डिग्री प्राप्त की। पहले उन्होंने हितोपदेश का अनुवाद किया। 1845 ई. में वे पेरिस चले गए और वहाँ प्रो. बर्नाउफ की प्रेरणा से ऋग्वेद पर काम करना आरम्भ किया। लगभग बीस वर्षों के अध्यवसाय के पश्चात् मैक्समूलर ने सायण भाष्य सहित ऋग्वेद का सम्पूर्ण पाठ चार वॉल्यूम में तैयार किया। 1847 ई. में

मैक्समूलर इंग्लैण्ड में ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में आ गए और वहीं से उन्होंने ऋग्वेद का सम्पादन कर उसका सायण भाष्य सहित चार भागों में कई वर्षों में प्रकाशन किया। यह संस्कृत-वाङ्मय के वैदेशिक परिप्रेक्ष्य में बडी ऐतिहासिक घटना थी। वैदिक वाङ्मय पर इतना बडा काम करने के कारण मैक्समूलर 'मोक्षमूलर' कहलाये और उन्होंने स्वयं ऋग्वेद के सम्पादन पर पुस्तक के अन्दर अपना संस्कृतीकृत नाम इस प्रकार लिखा- 'सम्पादकः'- जर्मनदेशोत्पन्नः इङ्ग्लैण्डदेशवास्तव्यः मोक्षमूलरभट्टः'' मैक्समूलर ने 'हिस्ट्री ऑफ इण्डियन लिटरेचर' 'इण्डिया-व्हाट इट केन टीच अस' जैसी पुस्तकों के अतिरिक्त व्यापक स्तर पर संस्कृत के उपनिषद् आदि महान् ग्रन्थों का अंग्रेजी में अनुवाद किया तथा अन्य विद्वानों से अनुवाद कराकर उनका सम्पादन कर अनेक भागों में 'सेक्रेड बुक्स ऑफ द ईस्ट' नाम से प्रकाशित किया। इस महनीय कार्य से भी मैक्समूलर को अत्यधिक ख्याति मिली और संस्कृत विद्या के क्षेत्र में उनका क्रान्तिकारी योगदान रहा।

बर्लिन की हम्बोल्ट यूनिवर्सिटी में विद्यमान इण्डोलॉजी विभाग में फ्रांज़ बॉप के बाद 1867 ई. में ऑलब्रेश्ट वेबर चेयर पर आसीन हुए। वेबर के प्रतिष्ठित संस्कृत शिष्य थे जैकोबी एवं ल्यूमेन। 1902 ई. में रिचर्ड पिशेल वेबर के उत्तराधिकारी के रूप में नियुक्त हुए। पिशेल के कार्यकाल में ही 'तूर्फान ऐक्सपेडीशन' का कार्य हुआ, जिससे बर्लिन में भारतीय विद्या के शोध पर प्रभाव पड़ा। 1909 से 1935 तक हैनरिख ल्यूडर्स बर्लिन पीठ पर प्रतिष्ठित हुए। ल्यूडर्स 'ओरियण्टल कमीशन' के चेयरमेन तथा 'जर्मन सोसायटी ऑफ ओरियण्टल स्टडीज' के वाइस चेयरमेन रहे। 1950से 1965 तक बाल्टर रूबेन बर्लिन के 'इण्डोलॉजी विभाग' में फुल प्रोफेसर रहे। उन्होंने भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पर काम किया। रूबेन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य था, कालिदास पर 'Kalidasa : The Human Meaning of his works' पुस्तक का लेखन। रूबेन ने बर्लिन यूनिवर्सिटी एवं 'बर्लिन एकेडेमी ऑफ साइंसैज़' में समन्वय स्थापित कर काम किया। 1972 ई. से प्रो. वुल्फगांग मोर्गेनरॉथ ने हम्बोल्ट यूनिवर्सिटी के 'इण्डोलॉजी विभाग' के अध्यक्ष पद को संभाला। प्रो. रॉथ ने महाभारत पर लम्बे समय तक कार्य किया, साथ ही संस्कृत व्याकरण, भारतीय भाषाओं के इतिहास तथा जैन साहित्य पर अपना योगदान किया। उन्होंने विशाखदत्त-कृत 'मुद्राराक्षस' नाटक का जर्मन में अनुवाद भी किया। बीसवीं शताब्दी के आठवें दशक में जर्मनी में दो बड़े संस्कृत सम्मेलनों का आयोजन हुआ। प्रथम फ्रांज़ बॉप की 'फुल प्रोफेसरशिप' तथा पूर्व जर्मनी में संस्कृत अध्यापन का 150 वाँ वर्ष मनाने के

लिए 1974 में बर्लिन में 'इण्टरनेशनल संस्कृत कॉन्फ्रेंस' का आयोजन हुआ। द्वितीय, 1979 में 'इण्टरनेशनल' एसोसिएशन ऑफ संस्कृत स्टडीज' के तत्त्वावधान में चौथी 'वर्ल्ड संस्कृत कान्फ्रेंस' आयोजित हुई, जिसमें जर्मन कलाकारों द्वारा रॉथ-अनूदित 'मुद्राराक्षस' नाटक का जर्मन में मञ्चन कर अभूतपूर्व कार्य किया गया। इस अवसर पर दो महत्व्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुए। 1. दो भागों में 'Sanskrit Studies in the G.D.R., Part - I - Reports, Part - II - Bibliography' (2) Sanskrit Studies Outside India, Vol. I, II & III.' तीन भागों में। पूर्व बर्लिन तथा पश्चिम बर्लिन, दोनों स्थानों पर 'जर्मन स्टेट लाइब्रेरी' हैं, जहाँ एशियो-अफ्रीकन सेक्शन में संस्कृत की हजारों पुस्तकें हैं। बर्लिन के अतिरिक्त हाले, लाइप्ज़िग, ग्रीफ्सवाल्ड, येना, रोस्टॉक आदि नगरों के विश्वविद्यालयों में संस्कृत अध्ययन की परम्परा चली। हाले में प्रो. पॉट, गेल्डनर, पिशेल, जोहनास, मीलिश, हैंज मोडे, यूगेन हल्ट्श आदि विद्वानों ने काम किया। लाइप्ज़िग की कार्ल मार्क्स यूनिवर्सिटी में हर्मन ब्रोकहाउस, विण्डिश, जोहनास हर्टेल, फ्रेड्रिक वैलर आदि भारतीय विद्या की पीठ पर प्रतिष्ठित रहे। ब्रोकहाउस 'जर्मन ओरियण्टल सोसायटी' के संस्थापक एवं मैक्समूलर के गुरू थे। हर्टेल ने पञ्चतन्त्र का सम्पादन कर प्रकाशित कराया था। येना में बर्टहोल्ड डेलब्रुक, ओटो वॉन बोथलिंक, फ्रेड्रिक स्लोटी, अलबर्ट ड्रेब्रनर, रिचर्ड हौसचिल्ड, आदि विद्वानों ने काम किया। जर्मनी के इन विद्वानों एवं संस्थानों के अध्ययन एवं अनुसन्धान के विषय थे- वेद, उपनिषद्, भारतीय दर्शन, सूत्र वाङ्मय, अर्थशास्त्र, धर्मशास्त्र, भाषाशास्त्र, व्याकरण, संस्कृत-काव्य, कथा साहित्य, नाटक, अनुवाद कार्य, ग्रन्थ-सम्पादन, समीक्षण, बौद्ध वाङ्मय, जैन वाङ्मय, पुरातत्त्व, कलायें, संस्कृत साहित्य का इतिहास, शब्दकोष-निर्माण आदि।

पश्चिम जर्मनी के लगभग बीस विश्वविद्यालयों में संस्कृत-अध्यापन एवं अनुसन्धान का काम विधिवत् हो रहा है। ये विश्वविद्यालय हैं:-

पश्चिम बर्लिन, बोशम, बॉन, ऐर्लांगन, फ्रेंकफर्ट, फ्राइबुर्ग, जीसैन, गोटिंगन हाम्बुर्ग, हाइडिलबर्ग, कील, क्लोन, मैंज, मारबुर्ग, म्युंशैन, मिंस्टर, रीगेन्सबुर्ग, सारब्रयूकेन, ट्युबिंगन, वर्ज़बुर्ग आदि नगरों में स्थित विश्वविद्यालय। यह तथ्य अवधेय है कि इनमें से किसी विश्वविद्यालय में 'संस्कृत विभाग' नाम से पृथक विभाग नहीं हैं। अन्य नामों एवं विषयों से जुड़कर संस्कृत का अध्ययन किया जाता है, जैसे हाइडिलबर्ग में 'साउथ एशिया इंस्टीट्यूट' में 'डिपार्टमेण्ट ऑफ मॉडर्न साउथ एशियन लैंग्वेजैज एण्ड लिटरेचर्स' के अन्तर्गत संस्कृत अध्ययन होता है। बॉन विश्वविद्यालय

में पहले 'इण्डोलोजिशेज सेमिनार' नाम था, पर अब इसे 'इंस्टीट्यूट ऑफ ओरियण्टल एण्ड एशियन स्टडीज' कहते हैं। मारबुर्ग विश्वविद्यालय में इसे 'डिपार्टमेण्ट ऑफ इण्डोलॉजी एण्ड टिबटोलॉजी' कहा जाता है। ट्यूबिंगन विश्वविद्यालय में इसे 'डिपार्टमेण्ट ऑफ इण्डोलॉजी एण्ड कम्पेरेटिव रिलिजन' नाम से बोधित किया जाता है।

जर्मनी में संस्कृत-अध्ययन हेतु प्रायः चार वर्ष की अवधि होती है। इसके बाद परास्नातक एम.ए. की उपाधि प्राप्त होती है। दो या तीन अथवा अधिक वर्षों तक शोधकार्य करने पर पी.एच.डी. डिग्री प्रदान की जाती है। पश्चिम बर्लिन की फ्री यूनिवर्सिटी में संस्कृत-अध्ययन की परम्परा विगत पचास वर्षों से चली आ रही है, पर अब वह बाधित हो गई है। संस्कृत-विद्या की परम्परा बॉन यूनिवर्सिटी में 1818 में श्लिगल से आरम्भ हुई। उसके पश्चात् क्रिश्चियन लासेन तथा थियोडोर आउफ्रेश्ट ने विद्वत्ता की इस परम्परा को आगे बढ़ाया। 1899 से 1921 तक हर्मन जैकोबी जैसा प्रतिष्ठित मनीषी इस पीठ पर आसीन हुआ, जिसका भारतीय गणित, काव्य, पुराण, रामायण, जैन विद्या तथा प्रस्तर लेखविज्ञान जैसे अनेक विषयों पर असाधारण अधिकार था। इस क्रम में यहाँ अनेक विद्वान हुए, पर यहाँ लम्बे समय तक प्रो. माइकेल हान ने अध्यापन कार्य किया। बाद में वे फिलिप्स यूनिवर्सिटी, मार्बुर्ग में फुल प्रोफेसर होकर चले आए। प्रो. हान 'ऑल इण्डिया ओरियण्टल कॉन्फ्रेंस' एवं 'वर्ल्ड-संस्कृत कॉन्फ्रेंस' के अधिवेशनों में नियमित रूप से आते रहे। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र है- अलङ्कृत काव्य, काव्यशास्त्र, छन्दःशास्त्र, बौद्धदर्शन, संस्कृत साहित्य का इतिहास, तिब्बतीय अध्ययन आदि। उन्होंने अनेक दुर्लभ पाण्डुलिपियों का विधिवत् अध्ययन कर उन्हें प्रकाशित करने का महनीय कार्य किया है- जैसे हरिभट्टजातकमाला, लोकानन्दनाटक, कपीश्वरजातक, शिवस्वामी-कृत कप्फिणाभ्युदय आदि। इस प्रकार प्रो. हान की सम्पादन, लेखन एवं अनुसन्धान की पद्धति नितान्त व्यवस्थित एवं वैज्ञानिक है। फ्राइबुर्ग यूनिवर्सिटी में प्रो. श्राइडर एवं हिनूबर जैसे विद्वानों ने संस्कृत अध्ययन को लम्बे समय तक गति प्रदान की। गौटिंगन यूनिवर्सिटी में संस्कृत-अध्यापन 1826 से आरम्भ हुआ। यहाँ फ्रांज़ कीलहोर्न ने पाणिनीय व्याकरण एवं भाषाशास्त्र के अध्ययन को आगे बढ़ाया तथा हर्मन ओल्डेनबर्ग ने वेद, महाभारत एवं बौद्धदर्शन के अध्ययन को आगे बढ़ाया। इसी तरह पैंतीस वर्ष तक यहाँ भी पीठ पर प्रतिष्ठित हेंज बेचेर्ट ने बौद्ध अध्ययन को गति प्रदान की। हामबुर्ग में जहाँ स्टेन कोमो एवं अरबर्ट वैज़लर ने काम किया, वहाँ हाइडिलबर्ग में हर्मन बर्गर ने। फिलिप्स

यूनिवर्सिटी, मारबुर्ग में संस्कृत अध्ययन का आरम्भ 1843 से हुआ। 1957 से यहाँ विल्हैम राउ ने अध्यक्ष पद सँभाला और वाक्यपदीय पर व्याकरण-सम्बन्धी कार्य किया। दूसरे प्रख्यात अध्यक्ष रहे प्रो. माइकेल हान। वर्तमान काल में जुर्गेन हैनेडर संस्कृत भाषाशास्त्र तथा आधुनिक संस्कृत के ज्ञाता विद्वान् हैं। उनके आने से विभाग को पुनः गति प्राप्त हुई है। म्यूनिख यूनिवर्सिटी में फ्रैडरिक् विल्हैम ने कौटिल्य के अर्थशास्त्र पर विशेष कार्य किया। वर्तमान काल में प्रो. जिडेनबॉस ने जैन धर्म पर विशेष कार्य किया है। म्युंस्टर यूनिवर्सिटी में भी जैकोबी जैसे उच्चस्तरीय विद्वानों का सान्निध्य रहा। ट्यूबिंगन यूनिवर्सिटी में रूडोल्फ फॉन रॉथ ने 1845 से संस्कृत-अध्यापन आरम्भ किया। रॉथ वैदिक विद्वान् थे और 'St. Petersburg Dictionary of Sanskrit' में योगदान के कारण उन्हें ख्याति मिली। वर्ज़बुर्ग यूनिवर्सिटी में 19वीं शताब्दी के आरम्भ में संस्कृत-शिक्षा आरम्भ हुई। जर्मनी में संस्कृत-सम्बन्धी अनेक परियोजनाएँ इस प्रकार प्रचलित रहीं- जैसे संस्कृत-पाण्डुलिपियों की कैटेलॉग-रचना, बौद्धग्रन्थों के संस्कृत-शब्दकोष का निर्माण, संस्कृत-बौद्ध साहित्य का क्रमबद्ध पर्यवेक्षण, नेपाल-जर्मन मेन्यूस्क्रिप्ट प्रिज़र्वेशन प्रोजैक्ट, शोध-पत्रिकाओं का प्रकाशन, 'जर्मन ओरियण्टल सोसायटी' का कार्य, 'एकेडेमी ऑफ साइंसैज़' का कार्य।

फ्रांस

यूरोप के फ्रांस देश में संस्कृतविद्या के प्रसार का आरम्भ अठारहवीं शताब्दी में हो गया था। ईसाई धर्म प्रचार हेतु गई मिशनरियों में से कुछ लोगों ने 1735 ई. के लगभग अनेक संस्कृत-पाण्डुलिपियों को फ्रांस की राजधानी पेरिस भेजा और ये यहाँ के पुस्तकालय में रख दी गईं। यह क्रम चलता रहा और इस तरह यहाँ लगभग दो हज़ार पाण्डुलिपियों का संग्रह हो गया। ये पाण्डुलिपियाँ हाथ के बने कागज़ों, ताड़पत्रों या भोजपत्रों पर लिखित हैं, ब्राह्मी, देवनागरी या बँगला लिपि में हैं, तथा काव्यशास्त्र, वेद वेदाङ्ग, व्याकरण, तन्त्र, आयुर्वेद आदि विषयों पर हैं। इन्हें फ्रांस के राष्ट्रीय पुस्तकालय (Bibliotheque Nationale) में 'ओरियण्टल मेन्यूस्क्रिप्ट सेक्शन प्रभाग में सुरक्षित रखा गया है। इन हस्तलिखित ग्रन्थों का पहला 'डैस्क्रिप्टिव कैटेलॉग' ज्याँ फिलियोजा ने तैयार कराया था और शेष काम उनके पुत्र प्येट सिलवाँ फिलियोजा कर रहे हैं। इन हस्तलेखों का संग्राहक एक मिशनरी था जाँ फ्रांस्वा पों, जिसने बोपदेव-कृत व्याकरण-ग्रन्थ 'मुग्धबोध' के सहारे एक संस्कृत-व्याकरण तथा अमरकोश के सहारे एक संस्कृत-शब्दकोश भी तैयार किया था। यह कार्य संस्कृत-भाषा के अध्ययन की आधार शिला बना।

फ्रांस में संस्कृत-अध्ययन का नया अध्याय पेरिसस्थित 'कॉलेज टु फ्रांस' में 1814 ई. में संस्कृत चेयर की स्थापना से आरम्भ हुआ जो समग्र योरोप में संस्कृत की प्रथम पीठ थी। इस पीठ पर पहले प्रो. ए.एल. चेजी प्रतिष्ठित हुए, जिन्होंने संस्कृत-व्याकरण का परिज्ञान कर 1830 में पूर्व प्राप्त पाण्डुलिपियों में से 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' का बँगला संस्करण प्रकाशित कराया था और फिर बाद में उसका फ्रैञ्च भाषा में अनुवाद भी किया था। उनके अनन्तर प्रो. यीगेन बुरनूफ, (1801-1852) इस पीठ पर आसीन हुए और उन्होंने संस्कृत-अध्ययन की वैज्ञानिक पद्धति का प्रवर्तन किया और संस्कृत में लिखित धार्मिक साहित्य पर ध्यान केन्द्रित किया। प्रो. बुरनूफ ने ही यहाँ कुछ दिन मैक्समूलर को संस्कृत भाषा पढ़ाई थी और वे ही उनके लिए ऋग्वेद के सम्पादन हेतु प्रेरणास्त्रोत बने। बुरनूफ के बाद बर्गेञ्ज, सिल्वाँ लेवी, सेडेस, ज्यूल ब्लाख एवं लुई रेनू ने संस्कृत-अध्यापन एवं अनुसन्धान को आगे बढ़ाया। बर्गेञ्ज का मुख्य कार्य वैदिक वाङ्मय में था, जबकि सिल्वाँ लेवी ने मुख्यतया ब्राह्मण-ग्रन्थों पर कार्य किया। ज्यूल ब्लाख भाषाविज्ञानी थे और इसी क्षेत्र में उन्होंने योरोपीय एवं भारतीय विद्वानों के शोध कार्य का निर्देशन किया व लुई रेनू ने वेद, व्याकरण, संस्कृत-काव्य एवं नाट्य, पौराणिक महाकाव्य बौद्ध संस्कृत वाङ्मय एवं कम्बोडियन संस्कृत-अभिलेखों पर व्यापक कार्य किया। लुई रेनू की जन्म शताब्दी मनाने के लिए फ्रांस में 1996 में एक 'अन्तर्राष्ट्रीय सङ्गोष्ठी' का आयोजन किया गया, जिसमें वेद, व्याकरण एवं लौकिक संस्कृत-साहित्य के अनेक विद्वानों ने भाग लिया। पेरिस की सोरबोन यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर के रूप में लुई रेनू ने अनेक संस्कृतज्ञों की पीढ़ी तैयार की तथा संस्कृत-अध्ययन के लिए पाठ्य पुस्तकें भी। रेनू की ही परम्परा के विद्वान थे ज्याँ फिलियोज़ा, जिन्होंने आयुर्वेद, ज्योतिष, तन्त्र तथा वैज्ञानिक वाङ्मय पर अपना शोधकार्य केन्द्रित किया। ज्याँ फिलियोजा के ही प्रयास से भारत के दक्षिण भाग पाण्डिचेरी में 1955 ई. में 'फ्रैञ्च इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी' की स्थापना हुई थी, और 1977 तक वे स्वयं इसके निदेशक रहे थे।

प्रो. व्येर सिलवाँ फिलियोज़ा ज्याँ फिलियोज़ा के ही संस्कृतविद् पुत्र हैं, जो पेरिस में स्थित 'प्रेक्टिकल स्कूल ऑफ हायर स्टडीज' के अंगभूत भारतीय विद्या विभाग के निदेशक रहे हैं। उन्हें संस्कृत-विद्याध्ययन का दाय पितृपरम्परा से मिला है। प्रो. फिलियोज़ा एशियाई देशों में स्थित भारतीय विद्याओं के उच्चतर शोध संस्थान 'इकोले फ्रांक्राई देक्स्ट्रीम ओरियण्ट' तथा पेरिस स्थित संस्कृत के विशाल ग्रन्थालय एवं संस्थान 'इंस्टीट्यूट दे सिविलाइजेशन इण्डेने' से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं। प्रो.

फिलियोज़ा मूलतः वैयाकरण हैं। उन्होंने पतञ्जलि-कृत महाभाष्य की दो टीकाओं कैय्यटकृत 'प्रदीप' तथा नागेशकृत 'उद्योत' का तुलनात्मक अध्ययन कर इस पर डॉक्टरेट उपाधि प्राप्त की है। साथ ही पाण्डिचेरी के भारतीय विद्या संस्थान से महाभाष्य को पाँच अङ्कों में प्रकाशित किया है तथा उसकी शोधपरक भूमिका लिखी हैं। उन्होंने पाणिनीय व्याकरण के अनेक सूत्रों पर शोध-निबन्ध लिखे हैं। 'विज्ञानक्षेत्रे संस्कृतम्' जैसे लेख लिखकर स्पृहणीय कार्य किया है। साथ ही पेरिस से प्रकाशित 'एन्साइक्लोपीडिया यूनिवर्सलिस' में संस्कृत-व्याकरण का इतिहास लिखकर उत्कृष्ट योगदान किया है। प्रो. फिलियोज़ा ने काव्य के क्षेत्र में नीलकण्ठ दीक्षित की 'गुरूतत्त्वमालिका' तथ काव्यशास्त्र के क्षेत्र में कुमारस्वामी की 'रत्नापाण' टीका सहित विद्यानाथ की 'प्रतापरूद्रीय' का भूमिका-टिप्पणी सहित प्रकाशन किया है। इसके अतिरिक्त शास्त्रों के इतिहास, शिलालेख-विद्या, पुरातत्त्व विद्या, भारतीय धर्म एवं दर्शन, तन्त्र, भारतीय विद्या का इतिहास आदि विषयों पर प्रो. फिलियोज़ा ने अनेक शोध-पत्र लिखकर उत्तम सारस्वत सेवा की है। संस्कृत-विद्या में रमकर वे पूरी तरह संस्कृत मय एवं भारतीय-संस्कृति मय हो गए हैं। पेरिस की सोरबोन यूनिवर्सिटी में लुई रेनू की शिष्य-परम्परा की अन्यतम प्रो. कोलेत कैय्या हुईं, जो जैन दर्शन एवं प्राकृत की विशेषज्ञ थीं। उनके निधन के पश्चात् जैन धर्म-विशेषज्ञ के रूप में प्रो. नलिनी बलबीर ने उनका स्थान ग्रहण कर लिया है। इसी यूनिवर्सिटी की प्रो. पोर्शे संस्कृत-काव्यशास्त्र में अधिक रूचि ले रही हैं तो प्रो. ब्रूनों डेगंस ने वास्तुशास्त्र पर काम किया है तो प्रो. हूलाँ ने प्राचीन भारतीय इतिहास पर।

फ्रांस की राजधानी पेरिस संस्कृत के अध्ययन-अध्यापन एवं अनुसन्धान का प्रमुख केन्द्र है- पेरिस यूनिवर्सिटी-3, जिसमें आरम्भ से लेकर उच्च शिक्षा तक संस्कृत की पढ़ाई होती है। परास्नातक उपाधि प्राप्त करने के लिए संस्कृत भाषा, साहित्य, वैदिक वाङ्मय, भारतीय आर्य भाषाएँ, धर्म, दर्शन, कला तथा आधुनिक भारतीय भाषाओं का पाठ्यक्रम है। उच्च अध्ययन के विषयों पर शोध कार्य कर डॉक्टरेट उपाधि दी जाने की भी व्यवस्था है। यही यूनिवर्सिटी है, जिसमें भारत की भारतीय सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद् (आई.सी.सी.आर.) द्वारा नियुक्त 'विजिटिंग प्रोफेसर' तीन वर्ष तक रहकर अध्यापन करता है। सोरबोन पेरिस यूनिवर्सिटी-4 में तुलनात्मक दर्शन एवं भारतीय दर्शन के अध्यापन एवं अनुसन्धान पर बल है। पेरिस यूनिवर्सिटी-10 में भी संस्कृत एवं दर्शन पढ़ाने की व्यवस्था है। पेरिस में भारतीय इतिहास एवं पुरातत्त्व पर भी काम होता है।

भारतीय विद्याओं एवं मानविकीय विषयों से सम्बन्ध रखने वाली संस्था है- 'Mais Des Sciences De Homme' 'उच्च मानविकीय संस्थान' जो भारत सेआये भाषा-साहित्य एवं समाज विज्ञान के विद्वानों को आश्रय देती है। इस संस्थान के सातवें तल पर 'ऐशियो-अफ्रीकन रिसर्च सेण्टर' एवं पुस्तकालय है। यहाँ से निकलने वाली शोध-पत्रिका का नाम 'पुरूषार्थ' रहा है। पेरिस में ही भारतीय भाषाओं का एक प्रमुख संस्थान है 'इनाल्को' (INALCO) जिसमें आधुनिक भारतीय भाषाओं की पढ़ाई होती है। इसमें फ्रान्सीसियों के साथ-साथ कुछ भारतीय प्राध्यापक-प्राध्यापिकायें भी पढ़ाते हैं। इसी तरह फ्रांस की एक शोध-संस्था सी.एन.आर.एस. में भी कतिपय संस्कृत-विद्वान् एवं विदुषियाँ शोधरत हैं। इसके अतिरिक्त पेरिस यूनिवर्सिटी के 'आर्ट एवं आर्कियोलॉजी इंस्टीट्यूट' में भारतीय मन्दिर-कला एवं शिल्पशास्त्र पर काम होता है। सोरबोन से सम्बद्ध 'Ecole hatique does Hautes Etudes' संस्था में स्वतन्त्र रूप से संस्कृत के विषय वेद, व्याकरण, भाषा विज्ञान, दर्शन आदि पर शोध एवं व्याख्यान होते हैं। यहाँ 1995-96 में 'Intellectual Work in Traditional India' पर सेमिनार चला। कुछ स्वतन्त्र संस्थाएँ भी आयुर्वेद, योग आदि पर रूचिपूर्वक कार्य करती हैं। पेरिस के अतिरिक्त अन्य स्थानों पर विद्यमान लियोन यूनिवर्सिटी, स्ट्रासबर्ग यूनिवर्सिटी, लाइफ यूनिवर्सिटी आदि में भी संस्कृत की पढ़ाई की व्यवस्था है। फ्रांस की 'National Centre for Scientific Research' संस्था में भी भारतीय विद्या, तन्त्र विद्या, तुलनात्मक भाषा-विज्ञान, लौकिक साहित्य आदि पर अनेक परियोजनायें चल रही हैं।

फ्रांस में संस्कृत की प्रतिष्ठा का एक बहुत बड़ा निदर्शन है यह तथ्य कि जब 1972 ई. में भारत की राजधानी नई दिल्ली में पहली विशाल 'इण्टरनेशनल संस्कृत कॉन्फ्रेंस' सफलतापूर्वक सम्पन्न हो गई, तब विश्वभर के प्राच्यविद्याविदों द्वारा संस्कृत की एक बृहत्तम अन्तर्राष्ट्रीय संस्था की स्थापना की गई। उसका नाम था 'International Association of Sanskrit Studies' अर्थात् 'अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृताध्ययन-समवाय' और उसका मुख्यालय पेरिस में रखा गया। संस्कृत की यह सर्वोच्च संस्कृत संस्था फ्रांस की राजधानी में सफलतापूर्वक काम कर रही है और इसी के तत्त्वावधान में पेरिस में 1977 में तीसरी 'वर्ल्ड संस्कृत कॉफ्रेंस' सम्पन्न हुई। अतः संस्कृत-वाङ्मय के गम्भीर अध्ययन-अनुसन्धान, सङ्गोष्ठी-सम्मेलन आदि की दृष्टि से फ्रांस एवं उसकी राजधानी पेरिस का योगदान स्वर्णाक्षरों में लिखे जाने योग्य है। आधुनिक नगर में पुरातन का प्रश्रय पाना आश्चर्यजनक हैं।

इटली

इटली में भारतीय विद्या एवं संस्कृत के अध्ययन का आरम्भ 1853 ई. से आरम्भ हुआ जब वहाँ संस्कृत की प्रथम पीठ की स्थापना हुई और उस पर जैस्परे गोरेशियो को प्रतिष्ठित किया गया। तबसे इटली में भाषा विज्ञान, व्याकरण, वेद-वेदाङ्ग, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, पुराण एवं पौराणिक महाकाव्य, संस्कृत-नाट्य एवं काव्य, धर्म, दर्शन, योग तन्त्र आदि विद्याओं पर शोधकार्य होता रहा है। 1957 से 1992 तक ट्यूरिन नगर के ट्यूरिन विश्वविद्यालय में संस्कृत की पीठ पर प्रो. ऑस्कर बोटो प्रतिष्ठित रहे, जिन्होंने वहाँ 'Institute of Indology' एवं 'Department of Oriental Studies' को जन्म दिया, जिसके वे 1996 तक अध्यक्ष रहे। ऑस्कर बोटो प्राचीन भारत की सामाजिक विधि एवं राजनीति, पौराणिक महाकाव्य, संस्कृत-नाट्य, इटली में संस्कृत-अध्ययन का इतिहास आदि के लेखक रहे। ट्यूरिन नगर में प्राच्य विद्या विभाग में स्टेफानो पियानो संस्कृत का अध्यापन कराते रहे तथा 'हिन्दू धर्म एवं पौराणिक वाङ्मय' नामक बृहत् परियोजना का निर्देशन भी करते रहे। 1993 में यहाँ सातवाँ 'राष्ट्रीय संस्कृत-विद्या-सम्मेलन' हुआ। यहाँ तन्त्र एवं योग पर भी काम हुआ तथा 'Encyclopedia dello Yoga' का लेखन-कार्य भी हुआ। यहीं पर मारियो पियान्तेली ने भारतीय दर्शन पर काम किया तथा गोविन्दनाथ-कृत 'श्रीशङ्कराचार्यचरित' का इटैलियन भाषा में अनुवाद किया।

इटली के ट्यूरिन नगर में संस्कृत एवं भारतीय विद्या के अध्ययन की सबसे महत्त्वपूर्ण संस्था है चेस्मियो- 'CESMEO' 'International Institute of Advanced Asian Studies' है, जिसकी स्थापना 1982 में हुई, जिसकी निर्देशिका बोटो के बाद वर्तमान समय में प्रो. इरमा पियोवानो हैं। इस संस्था की अनेक बृहत् परियोजनाओं में से एक है- 'Minor Sanskrit Texts and studies on Social and Religious Law' इसके अन्तर्गत इरमा पियोवानो ने 'दक्ष-स्मृति' का सटिप्पण सम्पादन किया है। संस्कृत एवं प्राच्यविद्या के विविध विषयों पर शोधकार्य करने वाले शोधार्थी विद्वानों के लिए चेस्मियो सबसे अधिक उपयोगी संस्था है। यह 'इटेलियन एसोसिएशन ऑफ संस्कृत स्टडीज़' का भी प्रतिष्ठान है। यहाँ इन विषयों पर व्याख्यान एवं परिचर्चाएँ आयोजित होती रहती हैं। प्रो. ऑस्कर बोटो के नेतृत्व में यहाँ पहली 'संस्कृत-इटेलियन डिक्शनरी' का निर्माण हुआ तथा संस्कृत की विधि एवं न्याय की पुस्तकों का सम्पादन-प्रकाशन हुआ। चेस्मियो संस्था के पास एक समृद्धिशाली

पुस्तकालय है, जिसमें संस्कृत, पालि, नेपाली, थाई, चीनी एवं जापानी भाषाओं के दुर्लभ ग्रन्थ हैं, जिनकी संख्या 32 हज़ार से भी अधिक है। चेस्मियो संस्था की एक अतिमहत्त्वपूर्ण योजना रही वाल्मीकि रामायण का इतालवी भाषा में अनुवाद। यद्यपि इटली में संस्कृत-विद्या के प्रतिष्ठापक जी. गैटोशियो ने रामायण का इटेलियन भाषानुवाद किया था, फिर भी प्रो. ऑस्कर बोटो के निर्देशन में वाल्मीकि रामायण का तीन भागों में इटली भाषा से अनुवाद किया गया। इसमें रोम यूनिवर्सिटी के विंसेंज़िना मज्ज़ारीनो ने बालकाण्ड का, पलेर्मो यूनिवर्सिटी के अगाता पैलेग्रिनी ने अयोध्या काण्ड का, मिलान यूनिवर्सिटी के कैर्लो डेला कासा ने अरण्य काण्ड का, पलेर्मो यूनिवर्सिटी के अगाता पैलेग्रिनी ने किष्किन्धा काण्ड का, पीसा यूनिवर्सिटी के सवेरियो सानी ने सुन्दर काण्ड का, कैग्लियरी यूनिवर्सिटी के तिज़ियाना पोण्टिलो ने युद्ध काण्ड का तथा पीसा यूनिवर्सिटी के सवेरियो सानी ने उत्तर काण्ड का इतालवी भाषानुवाद किया।

चेस्मियो संस्था का एक अन्य महत्त्वपूर्ण काम है संस्कृत एवं प्राच्य विद्या के सर्वाधिक प्रतिष्ठित जर्नल 'Indologica Taurinensia' का प्रकाशन। 1972-73 में 'इण्टरनेशनल एसोसिएशन ऑफ संस्कृत स्टडीज़' की स्थापना होने के बाद इसे इस समवाय का मुख पत्र घोषित किया गया। इसीलिए इसके मुख पृष्ठ पर ही नाम के नीचे, 'Official Organ of the International Association of Sanskrit Studies' छपा रहता है। इस संस्था द्वारा समायोजित अब तक सम्पन्न हुए विश्व संस्कृत सम्मलनों में प्रस्तुत उत्तम शोध-पत्रों का प्रकाशन इसी पत्रिका में होता रहा है। इस शोध जर्नल के एक से एक उत्कृष्ट वॉल्यूम पचास से अधिक संख्या में प्रकाशित हो चुके हैं और उच्चकोटि के प्रकाण्ड संस्कृत-विद्वान् ही इसके सम्पादन से जुड़े रहे हैं। यह भी ध्यातव्य है कि इटली में 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' का आयोजन दो बार हो चुका है। द्वितीय 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' 1975 में भारत के बाद इटली के ट्यूरिन नगर में सम्पन्न हुई। इरमा पियोवानो के निर्देशन में चेस्मियो से 'Orientalia' नाम से भी एक शोध-निष्कर्षों की श्रृंखला प्रकाशित होती है। आयुर्वेद एवं भारतीय चिकित्सा विज्ञान को भी यहाँ शोध का विषय बनाया गया है और इस विषय पर अनेक व्याख्यान मालाएँ एवं संगोष्ठियाँ आयोजित हो चुकी हैं।

संस्कृत एवं भारतीय विद्या का एक प्रसिद्ध केन्द्र है रोम की ला सपैञ्ज़ा यूनिवर्सिटी का 'ओरियण्टल स्टडीज़' विभाग, जहाँ आरम्भ में जिसैप्पे टूची तथा मारियो बुसाग्ली तथा बाद में रेनीरो ग्रोली एवं रफैले तोंरैला अध्यापन किया करते थे। यहाँ बौद्ध धर्म एवं दर्शन के विविध पक्षों पर विधिवत् कार्य हुआ। काश्मीरी शैव दर्शन

को भी अध्ययन का विषय बनाया गया। काव्यशास्त्र के क्षेत्र में स्वयं प्रो. ग्रोली ने 'Aesthetic Experience according to Abhinavagupta' नामक पुस्तक लिखी। ध्वन्यालोक का भी अनुवाद यहाँ किया गया। रोम में 'ISIAO' नाम से भी एक संस्थान है, जिसके अध्यक्ष आरम्भ में प्रो. टूची रहे और बाद में प्रो. घेरार्डो ग्रोली। इस संस्था ने अपने शोध-निबन्धों को 'Seril Orientale Roma' इस श्रृंखला में प्रकाशित कराया। पीसा यूनिवर्सिटी के भाषा विज्ञान विभाग में रोमानो लज्जारेनी ने संस्कृत विषयक शोध को प्रश्रय दिया तथा संस्कृत-व्याकरण एवं शब्दकोश पर अधिक ध्यान दिया। मिलान यूनिवर्सिटी के तुलनात्मक भाषा विज्ञान एवं प्राच्य भाषा विभाग में प्रो. कार्लो डेला कासा ने शोध एवं अध्यापन किया तथा कतिपय उपनिषदों का इटालियन अनुवाद किया। इसके अतिरिक्त इटली में कतिपय अन्य संस्थाओं जैसे पालेर्मो यूनिवर्सिटी, वेनेज़िया यूनिवर्सिटी, बोलोग्नो यूनिवर्सिटी, जेनोवा यूनिवर्सिटी आदि में स्थित प्राच्य भाषा एवं प्राच्यविद्या या भारतीय विद्या के विभागों में संस्कृत का विधिवत् अध्ययन-अध्यापन-अनुसन्धान होता है।

ब्रिटेन

ग्रेट ब्रिटेन अथवा यू.के. देश में चार विश्वविद्यालयों में संस्कृत पठन-पाठन एवं शोध कार्य प्रवर्तमान है- कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी, लन्दन यूनिवर्सिटी एवं एडिनबरा यूनिवर्सिटी। ब्रिटेन में संस्कृत की प्राचीनतम पीठ ऑक्सफोर्ड में ही थी। यह बोडन संस्कृत-प्रोफेसर की पीठ 1827 में ही स्थापित हो गई थी, पर यह 1832 में भरी गई। इस पीठ पर विल्सन, मोनियर विलियम्स, मेक्डानल, थॉमस जैसे आंग्ल विद्वान् विराजमान रहे, जिन के वैदिक वाङ्मय, संस्कृत-इंग्लिश-शब्दकोष, संस्कृत-साहित्य के इतिहास पर लिखित ग्रन्थ विश्वविख्यात हैं। थॉमस लम्बे समय तक ब्रिटिश म्यूज़ियम की ओरियण्टल लाइब्रेरी अर्थात् 'इण्डिया ऑफिस लाइब्रेरी' में रहे। 1944 से वे ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी की संस्कृत-पीठ पर प्रतिष्ठित हुए और 1976 तक रहे। संस्कृत से सम्बद्ध उनकी प्रसिद्ध पुस्तकें थीं-'The Sanskrit Language' तथा 'The Problem of Shwa in Sanskrit' थॉमस बरो के सातत्य में 1965 में आर.एफ. ग्रोम्ब्रिश की नियुक्ति हुई और वे 1976 से 2004 तक बोडन प्रोफेसर रहे। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र पालि, बौद्ध दर्शन, एवं द्रविड़ भाषाशास्त्र है। गोम्ब्रिश के बाद बोडन प्रोफेसर के पद पर क्रिस्टोफर ज़ेड मिन्कोस्की प्रतिष्ठित हुए।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में संस्कृत पीठ की स्थापना 1967 में हुई। पावेल, बेण्डल, रेप्सन जैसे विद्वानों के बाद 1936 में इस पर एच.डब्ल्यू. बैली तथा बाद में जॉन ब्रू प्रतिष्ठित हुए। क्रैम्ब्रिज एवं ऑक्सफोर्ड दोनों विश्वविद्यालयों में तथा अन्य दो विश्वविद्यालयों में भी संस्कृत का स्नातक पाठ्यक्रम चार वर्ष का है तथा उसके बाद परास्नातक एवं तब पी.एच.डी. एवं डी.फिल. डिग्रियों के लिए शोधकार्य की प्रक्रिया है। जॉन ब्रू के पश्चात् संस्कृत-शिक्षण के कार्य को जॉन स्मिथ ने सँभाला। अन्य कार्यों के अतिरिक्त स्मिथ ने महाभारत के मूल पाठ को सम्पादित कर इसके इलैक्ट्रानिक रूप को प्रकाशित किया। जॉन स्मिथ के पश्चात् ईविण्ड कार्स ने कैम्ब्रिज ज्वाइन किया। उनका मुख्य कार्य निरुक्त पर है। तत्पश्चात् भारतीय विद्या के विशेषज्ञ के रूप में विंसेज़ो वर्ज्यानी यहाँ नियुक्त हुए और व्याकरण पर विशेष कार्य किया और लिखा। रेमण्ड एलचिन, ब्रिज़ेट एलचिन एवं जूलियस लिप्रर इस परम्परा के संस्कृत-शिक्षक रहे।

लन्दन यूनिवर्सिटी में 1917 में संस्कृत के अध्ययन हेतु 'School of Oriental and African Studies' की स्थापना हुई। 1922 में सर राल्फ लिली टर्नर इस स्कूल में संस्कृत-प्रोफेसर के पद पर नियुक्त हुए और उन्होंने 'A Comparative Dictionary of the Indo Aryan Language' के रूप में महत्त्वपूर्ण लेखन किया। टर्नर की विरासत को जॉन ब्रू ने ग्रहण किया। 1959 में प्रो. जे.सी. राइट ने कैम्ब्रिज में संस्कृत-शिक्षण कोआगे बढ़ाया और वे 1999 तक रहे। राइट के दाय को निभाने का काम पीटर श्राइनर ने किया और फिर ए.एफ. स्टेंज़लर ने। लन्दन विश्वविद्यालय के इस स्कूल में एक 'वृन्दावन रिसर्च इंस्टीट्यूट' भी है, जिसका मुख्य काम संस्कृत-पाण्डुलिपियों का रख-रखाव करना है। इस स्कूल में ही वृन्दावन इंस्टीट्यूट की एक 'International Association' भी बनी है।

स्कॉटलैण्ड की राजधानी एडिनबरा में स्थित ऐडिनबरा यूनिवर्सिटी में संस्कृत एवं तुलनात्मक भाषा विज्ञान की पीठ, 1862 ई. में जॉन म्यूर के सत्प्रयासों से स्थापित हुई। इस पीठ पर एग्लिंग, आफ्रेक्ट, कीथ, एलन जैसे विद्वान् विराजित हुए। संस्कृत साहित्य के इतिहास लेखन में ए.बी. कीथ का नाम अग्रगण्य है। एम.ए. कॉल्सन ने भी मध्यवर्ती काल में एडिनबरा में अध्यापन कार्य किया। 1965 से प्रो.जॉन ब्रॉकिंगटन ने यहाँ शिक्षण एवं शोध के दायित्व को सँभाला। प्रो. ब्रॉकिंगटन का मुख्य कार्य रामायण, रामकथा एवं हिन्दूदर्शन पर है। अपनी पत्नी मेरी ब्रॉकिंगटन की सहायता से उन्होंने 'Epic and Puranic Bibliography' तैयार की। ब्रॉकिंगटन 2000 से 2012 तक 'इण्टरनेशनल एसोसिएशन ऑफ संस्कृत स्टडीज़' के महासचिव रहे और उन्हीं

के प्रयास से 2006 में एडिबरा यूनिवर्सिटी में 13वीं 'वर्ल्ड संस्कृत कॉन्फ्रेंस' आयोजित हुई थी। एडिनबरा के राष्ट्रिय पुस्तकालय में प्रभूत संख्या में संस्कृत-ग्रन्थ एवं पाण्डुलिपियाँ हैं। इस प्रकार इन चार विश्वविश्रुत विश्वविद्यालयों तथा कतिपय अन्य शैक्षिक-सांस्कृतिक संस्थाओं के कारण सम्पूर्ण ग्रेट ब्रिटेन में संस्कृत-संवर्धन की दिशा में उत्तम काम हो रहा हैं।

अमेरिका

संयुक्त राज्य अमेरिका संस्कृत-अध्ययन का एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र है। यहाँ येल, हारवर्ड, पेंसिल्वानिया, केलिफोर्निया, शिकागो एवं कोलम्बिया विश्वविद्यालयों में संस्कृत-अध्ययन की दीर्घ परम्परा रही है। सर्वप्रथम 1841 ई. में येल यूनिवर्सिटी में संस्कृत-अध्ययन का आरम्भ हुआ, जहाँ एडवर्ड सेलिस्बरी संस्कृत के प्रथम अध्यापक हुए। उनकी प्रेरणा से अनेक अमरीकी विद्वानों में संस्कृत के प्रति रूचि जाग्रत हुई। उन्हीं के प्रयास से 'American Oriental Society' की स्थापना हुई और प्राच्यविद्या के शोध-लेखों को प्रकाशित करने वाली 'Journal of American Oriental Society' शोध-पत्रिका का प्रचलन हुआ। 1854 में विलियम ड्वाइट ह्विटनी ने इस पीठ पर आसीन हो काम आरम्भ किया तथा तुलनात्मक भाषा विज्ञान एवं व्याकरण पर काम करते हुए 'Sanskrit Grammar' नामक प्रसिद्ध पुस्तक लिखी। ह्विटनी के स्थान पर महाभारत एवं धर्मशास्त्र के विशेषज्ञ हॉप्किन्स प्रतिष्ठित हुए। तदनन्तर फ्रेंकलिन इजर्टन नियुक्त हुए, जिनका 'Buddhist Hybrid Sanskrit' कोश बहुत प्रसिद्ध हुआ। 1881 से 1926 तक जान्स हॉप्किन्स युनिवर्सिटी संस्कृत-अध्ययन का बहुत बड़ा केन्द्र रही, जहाँ मॉरिस ब्लूमफील्ड ने काम किया तथा फ्रेंकलिन एजर्टन एवं नार्मन ब्राउन जैसे शिष्यों को प्रशिक्षित किया।

अमेरिका की हार्वर्ड यूनिवर्सिटी संस्कृत विद्या का एक बड़ा केन्द्र रही। यहाँ प्रो. लेनमान ने संस्कृत-अध्ययन की नींव डाली, वेद एवं व्याकरणशास्त्र पर काम किया। हार्वर्ड से संस्कृत-ग्रन्थमाला 'Harvard Oriental Series' को सम्पादित कर प्रकाशित करने एवं प्रवर्तन करने का श्रेय लेनमान को ही है। लेनमान के पश्चात् बौद्ध विद्याविशारद क्लार्क ने यहाँ आकर काम किया और उसके पश्चात् एच.एच. इंगल्स यहाँ नियुक्त हुए और नव्य न्याय दर्शन पर विशिष्ट शोध कार्य कर लेखन किया। दक्षिण एशियाई अध्ययन का एक बड़ा केन्द्र 1955 से शिकागो यूनिवर्सिटी में प्रवर्तित हुआ और बॉब्रिन्सकाय जैसे विद्वान् ने संस्कृत-अध्ययन का नेतृत्व किया।

अमेरिका की पेंसिल्वानिया यूनिवर्सिटी, फिलाडेल्फिया में 1947 में दक्षिण-एशियाई अध्ययन विभाग स्थापित हुआ। इसको स्थापित करने एवं आगे बढ़ाने में नार्मन ब्राउन का विशेष योगदान रहा। फ्रेंकलिन एजर्टन ने यहाँ 1926 से 1966 तक चालीस वर्ष रहकर प्राच्य विद्या के संवर्धन हेतु काम किया। 1960 से इस विभाग में एक बड़े विद्वान् का आगमन हुआ, और वे हैं जॉर्ज कार्डोना, जिन्होंने भारत रहकर पारम्परिक पण्डितों से संस्कृत-व्याकरण पढ़ा और पाणिनी-व्याकरण के विशेषज्ञ बनकर, अनेक पुस्तकें लिखकर 'मॉडर्न पाणिनि' कहलाये। वे भारत के विश्वविद्यालयों द्वारा अनेक मानद उपाधियों से अलङ्कृत किये गए तथा यहाँ के विश्वविद्यालयों में 'विजिटिंग प्रोफेसर' रहे। 2012 में उन्हें भारत द्वारा 'इण्टरनेशनल राष्ट्रपति सम्मान' से सम्मानित किया गया। वे 'अमेरिकन ओरियण्टल सोसायटी' के उपाध्यक्ष एवं 'अमेरिकन इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डोलॉजी' के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित रहे। उन्होंने संस्कृत-व्याकरण विषय पर बृहद् लेखन कार्य किया है। उनके सैकड़ों शोधलेख एवं दो दर्जन पुस्तकों में मुख्य हैं:- 'Panini : A Survey of Research ;' 'Recent Research in Paninian Studies,' 'Philosophy of Language in India' आदि। उन्होंने अष्टाध्यायी, महाभाष्य, काशिकावृत्ति, आपिशलिशिक्षा, ऋग्वेद-प्रतिशाख्य, निरुक्त आदि का इलैक्ट्रानिक डाटा भी तैयार किया है। पेंसिल्वानिया यूनिवर्सिटी ने 1984 में छठी 'वर्ल्ड संस्कृत कॉफ्रेंस' का आयोजन एवं आतिथ्य किया।

केलिफोर्निया यूनिवर्सिटी, बर्कले में भी संस्कृत-अध्ययन की दीर्घ परम्परा 1897 से है। यहाँ प्रो. ब्लूम फील्ड ने आकर अध्यापन-कार्य किया और 'वैदिक कॉनकॉर्डेन्स' नामक विशिष्ट ग्रन्थ का लेखन किया। इस क्रम में 1913 में इजर्टन इस पद पर आसीन हुए और इसके पश्चात् नार्मन ब्राउन। केलिफोर्निया के 'डिपार्टमेण्ट ऑफ साउथ एण्ड साउथ-ईस्ट एशियन स्टडीज़' में 1972 से प्रो. रोबर्ट पी. गोल्डमेन की नियुक्ति से संस्कृत को अत्यधिक प्रोत्साहन मिला। गोल्डमेन रामायण-विशेषज्ञ हैं और उन्होंने सम्पूर्ण रामायण का अँग्रेजी में अनुवाद एवं समीक्षण किया है। वे रामायण-परियोजना के निदेशक एवं मुख्य सम्पादक हैं और उन्हें अमेरिकन एकेडमी की फैलोशिप जैसे कई बड़े सम्मान मिल चुके हैं। उन्हें 'राष्ट्रपति सम्मान' से भारत के राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया जा चुका है। उनकी पत्नी सैली गोल्डमेन भी संस्कृतज्ञा एवं उनकी सह-अनुवादिका हैं। ये दम्पति-युगल भारत एवं संस्कृत से सर्वात्मना जुड़े हैं। अमेरिका के न्यूयार्क नगर में स्थित कोलम्बिया यूनिवर्सिटी भी संस्कृत विद्या का

केन्द्र रही है। यहाँ बौद्ध दर्शन के विद्वान् एलेक्स वेमैन बहुत समय रहे। वर्तमान काल में शैल्डेन पोलोक लम्बे समय तक यहाँ अध्यापन-रत रहे। पोलोक के संस्कृत-विद्या के क्षेत्र में अद्वितीय योगदान के लिए उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय 'राष्ट्रपति सम्मान' से भारत के राष्ट्रपति द्वारा सम्मानित किया गया। अमेरिका की इलिनोइ यूनिवर्सिटी-अर्वाना के प्रो. हंस हेनरिश हॉक भी वेद एवं व्याकरण के विशिष्ट विद्वान् हैं। इसके अतिरिक्त अमेरिका की टैक्सास यूनिवर्सिटी, फ्लोरिडा यूनिवर्सिटी, सदर्न मेथेडिस्ट यूनिवर्सिटी, मिशीगन यूनिवर्सिटी में भी संस्कृत-अध्ययन की स्वल्प व्यवस्था है।

थाइलैण्ड

सुदूर अतीत काल से संस्कृत भाषा और साहित्य ने दक्षिण-पूर्व एशिया के मानसिक जीवन पर गहन प्रभाव छोड़ा है। संस्कृत दक्षिण-पूर्व क्षेत्र का सुदृढ़ आधारस्तम्भ रहा है। संस्कृत ही वह समन्वयकारी तत्त्व है, जिसने इस क्षेत्र के देशों की बहुसंस्कृतीय विविधता को एकता में परिणत कर दिया है। संस्कृत के दो महनीय पौराणिक महाकाव्यों रामायण एवं महाभारत ने अपने सर्वव्यापी प्रभाव से सम्पूर्ण दक्षिण-पूर्व एशिया को व्याप्त कर लिया है। यहाँ प्रत्येक देश की अपनी एक रामायण है। थाइलैण्ड दक्षिण-पूर्व एशिया का एक प्रमुख देश है, जिसमें संस्कृत-अध्ययन की सुदृढ़ परम्परा रही है। संस्कृत भाषा में निबद्ध पौराणिक वाङ्मय, धर्मशास्त्र, विधिशास्त्र, राजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र का यहाँ की संस्कृति पर गहरा प्रभाव पड़ा, यह सांस्कृतिक प्रभाव दक्षिण-पूर्व एशिया, विशेष रूप से थाइलैण्ड की संस्कृति का संस्कृतीकरण ही है। संस्कृत भाषा एवं साहित्य का प्रभाव यहाँ की लेखनकला, भाषा एवं साहित्य, नाट्यकला, मर्म, दर्शन, पुराविज्ञान, ऋतुविज्ञान, ज्योतिर्विज्ञान, विधिशास्त्र, राजशास्त्र, वास्तुशास्त्र आदि पर परिलक्षित हुआ। भारत से आयातित ब्राह्मणों एवं पुरोहितों ने यहाँ संस्कृत के संवर्धन का काम किया। बौद्धधर्म एवं पालिभाषा के प्रसार ने भी यहाँ की संस्कृति को बहुत प्रभावित किया।

थाई भाषा, साहित्य एवं कला पर संस्कृत की अमिट छाप है। यदि थाई भाषा के स्वरूप का ध्यानपूर्वक निरीक्षण किया जाय तो हम पाते हैं कि थाई भाषा में संस्कृत के तत्सम एवं तद्भव शब्दों का बाहुल्य है। थाई भाषा संस्कृत से ऋणरूप में गृहीत शब्दों से भरी पड़ी है। यदि कोई रेडियो थाइलैण्ड के समाचार-प्रसार को सुने तो उसे आश्चर्यजनक रूप में संस्कृत के विशुद्ध शब्द सुनाई पड़ेंगे। यहाँ बहुत बड़ी संख्या में व्यक्तियों एवं स्थानों के नाम संस्कृतमय हैं। अनेक शिक्षा संस्थानों के नाम आश्चर्यजनक

रूप से संस्कृत मूल के प्रतीत होते हैं जैसे सिल्पाकोर्न यूनिवर्सिटी(शिल्पाकर विश्वविद्यालय), थम्मसात यूनिवर्सिटी(धर्मशास्त्र विश्वविद्यालय), यूलालौङ्कोर्न यूनिवर्सिटी(चूडालङ्करण विश्वविद्यालय) आदि। ज्ञान-विज्ञान की विभिन्न शाखाओं, अधिकार-पदों, प्रान्तों, नगरों आदि के नाम संस्कृत मूल के लगते हैं। थाइलैण्ड में आदि कवि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण का भी गहन प्रभाव हैं। रामायण एवं रामकथा के आधार पर ही थाई भाषा की रामायण 'रामकियेन' की रचना हुई। रामकियेन के पात्रों के नाम भी संस्कृत नामों के थाई रूपान्तर हैं। थाइलैण्ड के मार्गों, वनस्पतियों, होटलों, भवनों, पुलों एवं व्यापारिक प्रतिष्ठानों के नाम राकियेन के पात्रों के नामों पर रखे-गए हैं। रामायण संस्कृति ने थाइलैण्ड के साहित्य, संस्कृति, नाट्यकला, चित्रकला, मूर्तिकला, पुरातत्त्व, स्थापत्य आदि को व्यापक रूप से प्रभावित किया है। थाइलैण्ड का राजवंश संस्कृत एवं रामायण में अत्यधिक अभिरूचि रखता रहा है। थाइलैण्ड की राजधानी बैङ्कॉक में स्थित चार विश्वविद्यालयों में संस्कृत के अध्ययन की व्यवस्था रही है और ये है- शिल्पाकोर्न विश्वविद्यालय, चूलालौङ्कोर्न विश्वविद्यालय, माहचूलालौङ्कोर्न विश्वविद्यालय तथा महामकुट राजविद्यालय। शिल्पाकोर्न यूनिवर्सिटी यहाँ की उन पुरातन शिक्षण संस्थाओं में से एक है, जिसमें विगत साठ वर्षों से संस्कृत का प्रवर्तन हो चुका है। वर्ष 1955 से यहाँ के पुरातत्त्व सङ्काय में स्नातक स्तर पर संस्कृत-अध्ययन का प्रवर्तन हुआ। 1974 ई. से इस सङ्काय में प्राच्य भाषा विभाग (Department of Oriental Languages) की स्थापना हुई और संस्कृत को परास्नातक स्तर पर पाठ्यक्रम में रखा गया। इस प्रकार यह विभाग एम.ए. स्तर की पढ़ाई संस्कृत तथा पुरातन प्राच्य भाषाओं में ऐपीग्राफी-इन दो रूपों में करता रहा है। संस्कृत के अध्यापन एवं शोध पर अधिक बल देने के लिये 1977 में यहाँ एक संस्कृत शिक्षा केन्द्र 'Sanskrit Studies Centre' की स्थापना हुई। इस सेण्टर ने प्राच्य भाषा विभाग के सहयोग से वर्ष 2000 से संस्कृत में रिसर्च का पी-एच.डी. कोर्स भी आरम्भ कर दिया तथा संस्कृत का एक वार्षिक रिसर्च जर्नल भी प्रकाशित करना आरम्भ किया। डॉ. चिरपत प्रपण्डविद्या, जो यहाँ के प्राच्य भाषा विभाग में संस्कृत अध्यापक रहे, इस संस्कृत सेण्टर के निदेशक नियुक्त किये गए। डॉ. चिरपत वस्तुतः थाईलैण्ड में समग्र संस्कृत-अध्ययन-अध्यापन के सूत्रधार हैं। वे बौद्धदर्शन, भाषा विज्ञान, इतिहास, संस्कृति, पुराण, व्याकरण, पुरातत्त्व, अभिलेख आदि अनेक विषयों के ज्ञाता विद्वान हैं। उनके अनेक प्रकाशित लेखों में से दो हैं - 'Brahmanism and Buddhism as Recorded in the Inscriptions of Sukhothai Period', तथा 'The Evidence of Syncretism of Buddhism with

Shaivism in Suryavarman I's Reign'.

इस संस्कृत स्टडीज़ सेण्टर से जुडे हुए अन्य अध्यापक हैं डॉ. सम्याङ् ल्यौरमसाइ, जो डॉ. चिरपत के पश्चात इस केन्द्र के निदेशक हैं और जिन्होंने भगवद्गीता एवं सुत्तन्त पिटक का तुलनात्मक अध्ययन किया है। एक अन्य अध्यापक सोमबत मंगमीसुखसिरी ने शाङ्कर दर्शन एवं लङ्कावतार सूत्र का तुलनात्मक अध्ययन किया है। एक अन्य अध्यापक बमरूङ् काम एक ने अथर्ववेद संहिता पर काम किया है तथा हिन्दी भाषा का भी विशिष्ट ज्ञान प्राप्त किया है। प्राच्य भाषा विभाग की एक अध्यापिका प्रो. कुसुम रक्सामनि ने कनाडा के टोरण्टो विश्वविद्यालय में जाकर तुलनात्मक अध्ययन का काम किया है। एक अन्य प्राध्यापिका डॉ. मनीपिन फ्रोम्सुथिराक ने इंग्लैण्ड के लन्दन विश्वविद्यालय से धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन पर काम कर पी.एच.डी. डिग्री प्राप्त की। इसी विभाग के अवकाशप्राप्त अध्यापक चमलोङ् सर्पडथुक ने ऋग्वेद के प्रथम मण्डल पर काम किया तथा छात्रों के प्रयोगार्थ थाई भाषा में संस्कृत-व्याकरण की उपयोगी पुस्तकें लिखीं। यहाँ के विश्वविद्यालयों के प्राय: सभी अध्यापकों एवं शोधार्थियों ने सर्वाधिक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी तथा अन्य भारतीय विश्वविद्यालयों में विधिवत् कार्य कर डॉक्टरेट डिग्री प्राप्त की है। संस्कृत में एम.ए. परीक्षा में एक पेपर के रूप में शोधकार्य का चयन कर अनेक विद्यार्थियों ने संस्कृत का चयन कर अनेक विद्यार्थियों ने संस्कृत विषय के लघु शोध-प्रबन्ध भी लिखे हैं।

बैङ्कॉक स्थित चुलालौङ्कौर्न यूनिवर्सिटी में संस्कृत-अध्ययन की परम्परा रही है। यहाँ के 'डिपार्टमेण्ट ऑफ ईस्टर्न लेंग्वेजैज़' में परास्नातक स्तर तक संस्कृत की पढ़ाई होती रही है। यहाँ अध्यापन से जुड़े अध्यापक रहे हैं- डॉ. प्रफोद अस्वविरूल्हकर्न, डॉ. प्रानी लापाविक, तस्नीं सिंसाकुल, प्रो. बिसुध बुस्याकुल, प्रो. चिरायु नावावोंग्स, तथा डॉ. सक्स्री यमनद्दा। डॉ. प्रानी ने अमेरिका की पेंसिल्वानिया यूनिवर्सिटी से क्षेमेन्द्र के 'कलाविलास' पर काम कर डॉक्टरेट डिग्री प्राप्त की। थाइलैण्ड के दो बौद्ध विश्वविद्यालयों महा-चुलालौङ्कौर्न एवं महामकुट राजविद्यालय में बी.ए. कक्षा तक संस्कृत विषय अनिवार्य है। संस्कृत एवं पालि भाषा को अनिवार्य रूप में पढ़कर भी वे बौद्ध धर्म एवं दर्शन की पढ़ाई आगे बढ़ाते हैं। यहाँ एसो. प्रो. चूषकदी दीप्यगसोर्न संस्कृत के अध्यापक रहे हैं और उन्होंने सुखोथाई अभिलेखों पर संस्कृत-शब्दों के प्रभाव पर शोधकार्य किया है। थाइलैण्ड के कुछ विश्वविद्यालयों में

थाई भाषा के साथ संस्कृत के दो या तीन कोर्स पढ़ाने का प्रावधान है। थम्मासात यूनिवर्सिटी में असि.प्रो. जिसपोर्न इसी तरह संस्कृत पढ़ाती हैं। सिरीनखरीन यूनिवर्सिटी में प्रो. वोरालुक, च्याङ्ग्माई यूनिवर्सिटी के कमचाई अनन्तसुक तथा बुरापा यूनिवर्सिटी में योमडोय पेंगपोंगसा संस्कृत का शिक्षण करते रहे हैं।

जहाँ तक थाइलैण्ड में संस्कृत-लेखन की बात है, डॉ. चम्लौङ् सर्पड़नुक ने भी थाई विद्यार्थियों के लिए संस्कृत एवं व्याकरण के ज्ञान की दो दर्जन से अधिक पुस्तकें लिखी हैं। कतिपय अन्य विद्वान् लेखकों ने इस तरह अपनी लेखनी चलाई है-

1. राजा राम -प्रथम - रामकियेन-थाई 1978
2. राजा राम -द्वितीय - रामकियेन-नाट्यरूपान्तर
3. राजा राम - षष्ठ - नल-दमयन्ती-कथा-थाई-1913
4. पञ्जनप्यात- न्याय - विक्रमादित्य-थाई
5. नियोम रामथाई - महाभारत-युद्ध- थाई
6. द्विज प्लियांगविद्या - हितोपदेश -थाई
7. बिसुध बुस्याकुल - विशुद्ध निबन्ध-पौराणिक निबन्ध-संग्रह-थाई
8. विसन्त केतकेड - भाषा-संस्कृत-थाई
9. सुरसिथ थाईरतन - व्यास-शतकम्- सम्पादन
10. कुसुम रक्तामनि - प्रहेलिका, नलोपाख्यान
11. योमडोय पेंगपोंगसा- संस्कृत-पालि-थाई में गरूड़ नाग

थाइलैण्ड में संस्कृत, रामायण, गीता तथा अन्य सम्बद्ध विषयों पर विद्वानों ने ग्रन्थ एवं शोध आलेख लिखे हैं, जिनमें से प्रमुख हैं-

1. Ramayana and the Thai Monarchy - Prof. Srisurang Poolthupya.
2. Ethical Principles from Ramayana - Prof. Kawee Tungsubutra.
3. Ramayana in Asia - Chaturong Montrisastra
4. Bhagavad Gita : Faith Vs Wisdom - Chandarachana Singhathat.
5. Philosophical Thought and concept in the Mahabharata - Dr. Chirapat Prapandvidya.

इन समीक्षात्मक कार्यों के अतिरिक्त थाइलैण्ड में संस्कृत से थाई भाषा में अनेक अनुवाद कार्य भी हुए, जिनमें से कतिपय महत्त्वपूर्ण हैं:-

1. राजा राम षष्ठ द्वारा कृत अभिज्ञानशाकुन्तल, प्रियदर्शिका, शुनःशेप, महाभारत के नलोपाख्यान एवं सावित्र्युपाख्यान के अनुवाद।

2. प्रिंस बिद्यालौङ्कौर्न द्वारा कृत वेतालपञ्चविंशति की कुछ कथाओं के अनुवाद।

3. फ्रा सरप्रसेर्त द्वारा किये गए हितोपदेश, नीतिशतक, रत्नावली एवं विरागधर्म के अनुवाद।

4. लेफ्टिनेण्ट सेंग मानाविदुर द्वारा किये गए ललितविस्तर, बृहत्संहिता, भरत-नाट्यशास्त्र, भगवद्गीता एवं भागवत के कुछ अंशों के अनुवाद।

5. करूणा कुसलासय द्वारा कृत 'बुद्धचरित' के प्रथम एवं पञ्चम सर्ग का तथा सम्न्यङ् ल्यौरमसाइ द्वारा कृत 'सौन्दरनन्द' का अनुवाद।

अनुवाद की यह शृङ्खला बहुत विस्तृत है। थाई साहित्य एवं कला पर भरतकृत नाट्शास्त्र का बहुत प्रभाव पड़ा, जबकि यहाँ के विधि एवं न्याय पर मनुस्मृति ने बहुत प्रभाव छोड़ा। थाई देश की नीति पर संस्कृत के सुभाषित साहित्य का अपार प्रभाव पड़ा है। संस्कृत भाषा से थाई भाषा के जिन शब्दों की उत्पत्ति हुई है, इसे लेकर अनेक विद्वानों ने व्यापक रूप से अनुसन्धान किया है। थाइलैण्ड में दो बृहत् शब्दकोष तैयार किये गए हैं-

1. Sanskrit - Thai - English Dictionary - Captain Luang Bowonbannarak.

2. Pali - Thai - English - Sanskrit Dictionary - Prince Kitiyakara Krommaphra Chandaburinarunanath, 1970.

विश्वविद्यालयों के अतिरिक्त कुछ शैक्षिक साहित्यिक सांस्कृतिक संस्थायें भी हैं जो संस्कृत के प्रसार में कई प्रकार से योगदान करती हैं जो प्रायः बैङ्कॉक में हैं। ये हैं- थाई-भारत कल्चरल लॉज, थम्माखात यूनिवर्सिटी से सम्बद्ध इण्डिया स्टडीज सेण्टर, सियाम सोसायटी, राष्ट्रीय पुस्तकालय, गीता आश्रम, बोट प्राम आदि। थाई-भारत कल्चरल लॉज एवं इण्डिया स्टडीज़ सेण्टर वर्षभर संस्कृत एवं संस्कृति से

सम्बद्ध कार्यक्रमों के केन्द्र बने रहते हैं। बैङ्कॉक में इन संस्थाओं के तत्त्वावधान में 1986, 1994 एवं 2000 में क्रमशः द्वितीय, ग्यारहवीं एवं सत्रहवीं 'इण्टरनेशनल रामायण कॉन्फ्रेंस' हुई। साथ ही 1990 एवं 2000 में 'नेशनल महाभारत कॉन्फ्रेंस' हुईं। इण्डिया स्टडीज़ सेण्टर नियमित रूप से 'India Studies Journal' प्रकाशित करता है तो गीता आश्रम 'गीता-सन्देश' पत्रिका।

थाईदेश की भूमि पर संस्कृत की महत्ता को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने यहाँ अभ्यागत आचार्य (Visiting Professor) की पीठ को स्थापित किया। 1977 में सबसे पहले प्रो. सत्यव्रत शास्त्री चूलालौङ्कौर्न यूनिवर्सिटी में विज़िटिंग प्रोफेसर होकर गए। विदेश मन्त्रालय की संस्था 'भारत-सांस्कृतिक सम्बन्ध परिषद्' (I.C.C.R.) ने शिल्पाकोर्न यूनिवर्सिटी में इस पीठ को स्थायी रूप से स्थापित कर 1988 में प्रो. शास्त्री को पुनः यहाँ प्रेषित किया। उन्होंने संस्कृत अध्ययन को आगे बढ़ाने में बड़ा योगदान किया। उन्होंने थाइलैण्ड के अपने अनुभवों पर 'थाईदेशविलासम्' काव्य लिखा तथा थाई रामायण की कथा को आधार बनाकर पचीस सर्गों का 'श्रीरामकीर्तिमहाकाव्यम्' नामक महाकाव्य रचा। प्रो. शास्त्री के पश्चात् डॉ. उषा सत्यव्रत ने इस कार्य को वहन किया। तदनन्तर जुलाई, 1988 से अगस्त 2001 तक प्रो. हरिदत्त शर्मा इस सेण्टर में विज़िटिंग प्रोफेसर रहे। थाइलैण्ड पर लिखित उनकी अनेक कविताओं में से 'थाईभूमिरियम्' गीत बहुत प्रसिद्ध हुआ। साथ ही उनके महाकाव्य 'वैदेशिकाटनम्' के दो सर्ग थाइलैण्ड में विद्यमान संस्कृत एवं संस्कृति की स्थिति को समर्पित हुआ। प्रो. शर्मा के पश्चात् प्रो. राधा वल्लभ त्रिपाठी इस पद पर प्रतिष्ठित हुए। प्रो. त्रिपाठी ने अपने प्रवास काल में 'थाईदेशस्य इतिहासः संस्कृतिश्च' नाम से महत्त्वपूर्ण पुस्तक लिखी। इस क्रम में पुनः प्रो. राधा माधव दाश, प्रो. प्रतिमा मञ्जरी रथ तथा प्रो. केदार नाथ शर्मा यहाँ अभ्यागत आचार्य के रूप में प्रतिष्ठित रहे और 2014 से प्रो. सी. पाण्डुरंग भट्ट इस पद पर कार्यरत हैं।

बैङ्कॉक स्थित संस्कृत स्टडीज़ सेण्टर संस्कृत सम्बन्धी कार्यक्रमों एवं समारोहों का एक उत्तम केन्द्र है। अन्य अनेक कार्यक्रमों के अतिरिक्त इस सेण्टर द्वारा अब तक तीन बड़े अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किये गए हैं। इस केन्द्र द्वारा मई, 2001 में एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसका विषय था- 'Sanskrit in Southeast Asia : The Harmonizing Factor of Cultures' इस सम्मेलन में पन्द्रह देशों के प्रतिभागियों ने भाग लिया। कॉन्फ्रेंस की

प्रोसीडिंग्स का प्रकाशन हो चुका है। दूसरी बार इस केन्द्र ने जून, 2005 में 'Sanskrit in Asia : Unity in Diversity' विषय पर अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत सम्मेलन का आयोजन किया, जो अत्यन्त सफल रहा। इन दो वैश्विक सम्मेलनों की सफलता के कारण केन्द्र ने जून-जुलाई, 2015 में '16th World Sanskrit Conference' के आयोजन के गुरूतर भार को वहन किया। अब यह केन्द्र दक्षिण-पूर्व एशिया का बृहत्तम संस्कृत केन्द्र हो गया है और अनुदिन अभ्युदय की ओर अग्रसर है। इसके पास एक विशाल एवं समृद्ध पुस्तकालय है। इस केन्द्र एवं संस्कृत के समुन्नयन के लिए प्रो. चिरपत ने अब 'Sanskrit Studies Foundation' नाम से एक न्यास की नींव डाली है, अनेक अप्रवासी भारतीय भी यथाशक्ति द्रव्यदान द्वारा इस केन्द्र की सहायता करते रहते हैं। आरम्भ में यह सेण्टर शिल्पाकोर्न यूनिवर्सिटी की बिल्डिंग के एक भाग में स्थित था। सौभाग्य से एक उदार थाई महिला ने बैङ्कॉक नगर के बाहरी भाग में एक विशाल भूखण्ड इस केन्द्र को दान में दे दिया, जिससे वहाँ के परिसर में 'संस्कृत स्टडीज़ सेण्टर' की एक भव्य पाँच मंजिला बिल्डिंग का निर्माण हुआ है, जिसे विश्व स्तर पर संस्कृत का विशालतम एवं भव्यतम भवन कहा जा सकता है। यह केन्द्र इस क्षेत्र में भावी संस्कृताभ्युदय का प्रतीक हो गया है।

इन छः देशों में संस्कृत-अध्ययन का आकलन करने पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वैश्विक स्तर पर संस्कृतविद्या का अध्ययन एवं अनुसन्धान व्यापक रूप से होता रहा है और वर्तमान काल में भी हो रहा है। भारत की प्राचीनतम भाषा आज आधुनिकतम रूप में सामने आ रही है। आज विश्व के भारत, नेपाल, जर्मनी, फ्रांस, अमेरिका, कनाडा, इटली, आस्ट्रेलिया, आस्ट्रिया, बेल्जियम, जापान, चीन, थाइलैण्ड, इण्डोनेशिया, कम्बोडिया, मलेशिया, डेनमार्क, पोलैण्ड, हंगरी, लेटिन अमेरिका, नीदरलैण्ड्स, इंग्लैण्ड, स्कॉटलैण्ड, फिन्लैण्ड, रूस, क्रोएशिया, मैक्सिको, रोमानिया, स्पेन, स्वीडन, श्रीलङ्का, मॉरिशस, दक्षिण अफ्रीका, यूगोस्लाविया आदि देशों में संस्कृत का अध्ययन चल रहा है। संस्कृत-अध्ययन के लिए समस्त विश्व एक नीड बन गया है और संस्कृत-कुटुम्ब समग्र विश्व में फैला हुआ है।

प्रो. हरिदत्त शर्मा
पूर्व अध्यक्ष
संस्कृत-विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

Indology past & future
Sahitya Academy

Sanskrit studies in Europe
V. Raghvan